दिल्ली शहर में खेती - 6

शहरी खेती में कचरे का सही उपयोग

जन संसाधन केंद्र

शहरी खेती में कचरे का सही उपयोग



शहरी खेती में कचरे का सही उपयोग

यह प्रकाशन क्रिएटिव कॉमन्स एट्रिब्यूशन 4.0 अंतर्राष्ट्रीय लाइसेंस के तहत उपलब्ध कराया गया है : http: //creativecommons.org/licenses/by/4.0

इस प्रकाशन के किसी भी हिस्से का अनुवाद किया जा सकता है या उसे गैर-व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए लेखकों या पीपुल्स रिसोर्स सेंटर की पूर्व अनुमति के बिना पुनः प्रकाशित किया जा सकता है; लेकिन जन संसाधन केंद्र का सन्दर्भ दिया जाना जरूरी है।

नवंबर, 2020

शोध और पुनर्लेखन : आकिज़ फ़ारूक़, निशांत
डिज़ाइन : आकिज़ फ़ारूक़
छाया चित्र : अफ़ज़ल अदीब खान, अविकल पाराशरी, जेम्स वेंडलिंगेर, जो अथियाली
मूल शोध और आलेख : राधेश्याम मंगोलपुरी, राजेन्द्र रवि
शब्द संयोजन : अर्जुन सिंह
सहयोग : अक्षिता रावत, अनीता कपूर, नान्हू प्रसाद, राहुल कुमार, सुनीता रानी

प्रकाशक
जन संसाधन केंद्र (PRC) [www.prcindia.in]

सहयोग
इंस्टिट्यूट फॉर डेमोक्रेसी एंड सस्टेनेबिलिटी (आईडीएस), और
इंडिया इंस्टीट्यूट फॉर क्रिटिकल एक्शन : सेंटर इन मूवमेंट (CACIM) [www.cacim.net]

संपर्क
मकान सं. 7, लेन सं. 6, ब्लॉक-ए, हिमगिरि एन्क्लेव, पेप्सी रोड, मेन बुरारी रोड, नई दिल्ली -110084
prcindia@yahoo.com | @prc_in | + 91 98682 00316

केवल निजी वितरण के लिए

"शहरों की सफाई का बोझ कई नदी-तालाब ढो रहे हैं। मैले पानी से अटे जल स्रोतों में दुर्गन्ध है ऐसे समाज की, जो अपनी सुविधा के लिए किसी भी हद तक जा सकता है और जो अपने मैले पानी को साफ करने की कीमत चुकाने को तैयार नहीं है; जिसका सम्बन्ध अपने जल स्रोतों से केवल दोहन का है।
— सोपान जोशी (जल थल मल)

"मानव मल पैदा तो मिट्टी से ही होता है और आसानी से मिट्टी में वापस मिल सकता है, खासकर अगर खाद निर्माण प्रक्रिया के जरिये उसे ह्यूमस में तब्दील कर दिया जाए।"
— जोसफ जेंकिंस (द ह्यूमन्योर हैंडबुक)

शहरी समाज की पारिस्थितिक स्थिरता के लिए कचरे का प्रभावी प्रबंधन आवश्यक है। हमारे कचरे का एक बड़ा हिस्सा जैविक कचरा (जो कार्बनिक पदार्थ से बना होता है) रहता है जिसमें बचा-खुचा भोजन, पत्ते, खेती के अवशेष और मानव और पशुओं के मल-मूत्र शामिल हैं। इस जैविक कचरे में मौजूद नाइट्रोजन, पोटेशियम और फॉस्फोरस खेती की मिट्टी के लिए फायदेमंद होते हैं; इसलिए यह बहुत जरूरी है कि इन सभी को उस मिट्टी में वापस पहुँचाया जाए जहाँ से वे पैदा हुए थे और जहाँ उनका नैसर्गिक इस्तेमाल हो सके।

मानव मल-मूत्र को हीनता से देखने और मूल्यहीन समझने की बजाय उसे खेती के लिए लाभदायक पदार्थ के तौर पर देखा जाना चाहिए और उसका उपयोग मिट्टी को और उपजाऊ बनाने के लिए करना चाहिए। लेकिन फिलहाल तो शहरी आबादी के मल-मूत्र को खेती की जमीन में नहीं खपाया जा रहा है बल्कि सिर्फ फ्लश करके भुला दिया जा रहा है। ऐसा करने में बहुमूल्य उर्वरक तो बर्बाद किए ही जा रहे हैं, साथ ही साथ नदियों, नालियों के दूषित होने से शहरी पारिस्थितिकी और जन-स्वास्थ्य के नजरिये से भी खतरे पैदा हो रहे हैं।



भलस्वा लैंडफिल
तस्वीर : अफ़ज़ल अदीब खान,अविकल पाराशरी

सोपान जोशी की किताब 'जल थल मल' में कचरे के निस्तारण की समस्या की एक संकल्पना "शुचिता के तिकोने विचार" के रूप में की गई है। सोपान का तर्क है कि प्रकृति में कचरे जैसी कोई चीज नहीं है। बल्कि जिसे हम कचरा समझते हैं; वह ऐसी सामग्री है जिसे हम केवल इसलिए इस्तेमाल नहीं कर सकते क्योंकि हम उसका प्रभावी उपयोग करने का कोई तरीका नहीं बना पाए। उनका कहना है कि जल और थल (मिट्टी) के संस्कार से जो भोजन उगता है उसके बड़े हिस्से को हमारा शरीर कुछ घंटों के भीतर ही मल-मूत्र में बदल देता है। जैविक कचरे को कम्पोस्टिंग के जरिये मिट्टी में वापस मिलाया जा सकता है। ऐसा करने से उसमें मौजूद महत्वपूर्ण पोषक तत्व मिट्टी में मिलकर उसकी उर्वरता बढ़ा देते हैं (जोशी, 2017)।

खुले में शौच करने वालों को तो शर्मिन्दा करने की तमाम खबरें आती रहती हैं; लेकिन हम उन लोगों को नाम लेकर शर्मिंदा नहीं करते हैं जो जल निकायों में बिना ट्रीटमेंट किया हुआ सीवेज बहा रहे हैं या उन सबका जो पीने के पानी का उपयोग अपने मल और मूत्र को बहाने के लिए कर रहे हैं। सोपान ने जन संसाधन केंद्र द्वारा आयोजित किए गए 'फार्मिंग द सिटी' वेबिनार के दौरान भी इस बारे में चर्चा की थी। उनका कहना था कि हमारे मलमूत्र में ऐसे तत्व होते हैं जो विभिन्न बीमारियों का कारण बन सकते हैं; लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हमें बस इसे किसी तरह अपने शरीर से दूर कर देना है। हमें इस कचरे के समुचित प्रबंधन का तरीका निकालना होगा जिसमें मानव मल का प्रकृति-संगत और हितकारी उपयोग हो सके (इस सत्र की रिकॉर्डिंग के लिए यहाँ जाएँ : *https://youtu.be/Zzi6eqyFs78)*।



ओखला लैंडफिल
तस्वीर : जेम्स वेंडलिंगेर

"द ह्यूमन्योर हैंडबुक" मानव मल-मूत्र को मिट्टी के उपयोग में लाए जाने के तरीकों पर एक रोचक किताब है जिसे जोसेफ जेंकिंस ने 1996 में लिखा था। इसमें शौचालयों के इतिहास की चर्चा करते हुए इंग्लैंड में विकसित किए गए फ्लश शौचालय के दोषों की एक विवेचना पेश की गई है। जेंकिंस ने खुद प्रयोग करके मानव मल-मूत्र की कंपोस्टिंग के सरल और प्रभावी तरीके ईजाद किए हैं जिनके जरिये शहरी घरों के शौचालयों में पीने के पानी का दुरुपयोग किए जाने की बजाय खेती के लिए इस्तेमाल करने लायक खाद तैयार की जा सकती है। यही नहीं, जेंकिंस का सुझाव है कि हम अपने घरों में निकलने वाले सारे कचरे में से जैविक कचरे को अलग करके एक डिब्बे में डालकर कम्पोस्ट बनाना शुरू कर सकते हैं। जेंकिंस इसके बारे में बताते हुए लिखते हैं, "खाद के लिए पैसे की कोई जरूरत नहीं है और इसे (कम्पोस्टिंग को) दुनिया में किसी के भी द्वारा ऐसी किसी भी जगह पर किया जा सकता है जहाँ पौधे बढ़ सकें। निश्चित तौर से मल-मूत्र और अन्य उत्सर्जनों को खाद में तब्दील करने के प्रभावी और सुरक्षित तरीकों को सीखना आज की शहरी आबादी के लिए बेहद महत्वपूर्ण है" (जेंकिंस, 1996)।

एशिया के अलग-अलग देशों, जैसे जापान, चीन आदि में मानव मल-मूत्र का उपयोग खेती की जमीन को और उपजाऊ बनाने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में किया जाता रहा था। जेंकिंस ने अपनी किताब में इसका ब्यौरा देते हुए लिखा है कि एशियाई लोगों में मानव मल-मूत्र को कचरे की बजाय एक प्राकृतिक संसाधन के रूप में देखने की समझ विकसित थी। चीन, जापान, कोरिया आदि एशियाई देशों ने रासायनिक उर्वरकों का उपयोग न करते हुए जैविक खेती की प्रथाएँ विकसित कीं। जब पश्चिमी देश कचरे का उत्पादन कर रहे थे तो एशियाई देश कचरे और मल-मूत्र का इस्तेमाल करके अपने लिए पोषक तत्वों से भरा भोजन पैदा कर रहे थे।





भलस्वा लैंडफिल
तस्वीर : अफ़ज़ल अदीब खान, अविकल पाराशरी



ओखला लैंडफिल
तस्वीर : जेम्स वेंडलिंगेर

डॉ. एफ. एच. किंग ने अपनी पुस्तक "फार्मर्स ऑफ फोर्टी सेंचुरीज़" में चीन, कोरिया और जापान के लोगों द्वारा मानव मल-मूत्र के खेती में प्रभावी उपयोग के बारे में विकसित की गई प्रथाओं के बारे में विस्तार से लिखा है। वे कहते हैं कि सभ्य लोगों (civilized people) द्वारा अपनाई गई सबसे कुशल मृदा प्रबंधन तकनीकों में चीन, जापान और कोरिया में मानवमल के संरक्षण और उपयोग की तकनीकें हैं। चीन, कोरिया और जापान में मिट्टी की उर्वरता और खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए मानवमल का इस्तेमाल किया जाता रहा है; लेकिन पश्चिमी देशों ने इसी काम के लिए रासायनिक उर्वरकों का ईजाद और उपयोग किया जिससे मिट्टी की उर्वरता छोटी अवधि में बढ़ती है लेकिन एक लम्बी अवधि में उसकी गुणवत्ता काफी कम हो जाती है। चीन, कोरिया, जापान और अन्य पूर्वी सभ्यताओं और देशों ने मिट्टी को समृद्ध करने के लिए बड़े पैमाने पर जैविक तरीके अपनाए जिसका प्रभावी उपयोग करके मानव-जाति के स्वास्थ्य और भोजन जरूरतों को पूरा किया जा सकता है।

हताशा की बात है कि एशियाई लोग सदियों से जिन प्रथाओं का अभ्यास करते रहे, उन्हें धीरे-धीरे छोड़ दिया गया है। इस बारे में हालिया सर्वेक्षणों और अध्ययनों में भी एशियाई देशों की स्थिति निराशाजनक होती जा रही है। जापान ने सदियों से जैविक कचरा प्रबंधन को अपनाया हुआ था, पर हाल के वर्षों में ये तरीके धीरे-धीरे गायब होते चले गए हैं। उसी तरह चीन ने जैविक कचरे के प्रबंधन और मानव मल-मूत्र के प्रभावी उपयोग को बड़ी तेजी से त्यागा है।



भलस्वा लैंडफिल
तस्वीर : अफ़्ज़ल ख़ान और विकल पाराशरी

कम्पोस्टिंग के अलावा जैविक कचरे का एक प्रभावी उपयोग और है- बायोगैस में बदलकर ऊर्जा स्रोत के रूप में इस्तेमाल। जैविक कचरा ज्वलनशील गैसों का उत्पादन करता है और सदियों से इस ज्ञान का उपयोग कचरे को ऊर्जा के स्रोत के रूप में तब्दील करने में किया जाता रहा है। बायोगैस की शुरुआत और ऊर्जा के स्रोत के रूप में इसके प्रभावी उपयोग के लिए विकासशील देश ज्यादा सक्रिय रहे हैं। भारत, चीन, नेपाल, वियतनाम, बांग्लादेश, श्रीलंका और अन्य विकासशील देश ऐसे उदाहरण हैं जिन्होंने बड़े पैमाने पर जैविक कचरे का उपयोग बायोगैस बनाने के लिए किया है। खास तौर से चीन बायोगैस के लिए मानव मल-मूत्र का काफी समय प्रभावी उपयोग करता रहा है। चीन में, विशेष रूप से वहाँ के गाँवों में, ऊर्जा के स्रोत के रूप में बायोगैस का व्यापक उपयोग होता है। चीनी सरकार सब्सिडी वाले बायोगैस संयंत्र भी प्रदान करती है।

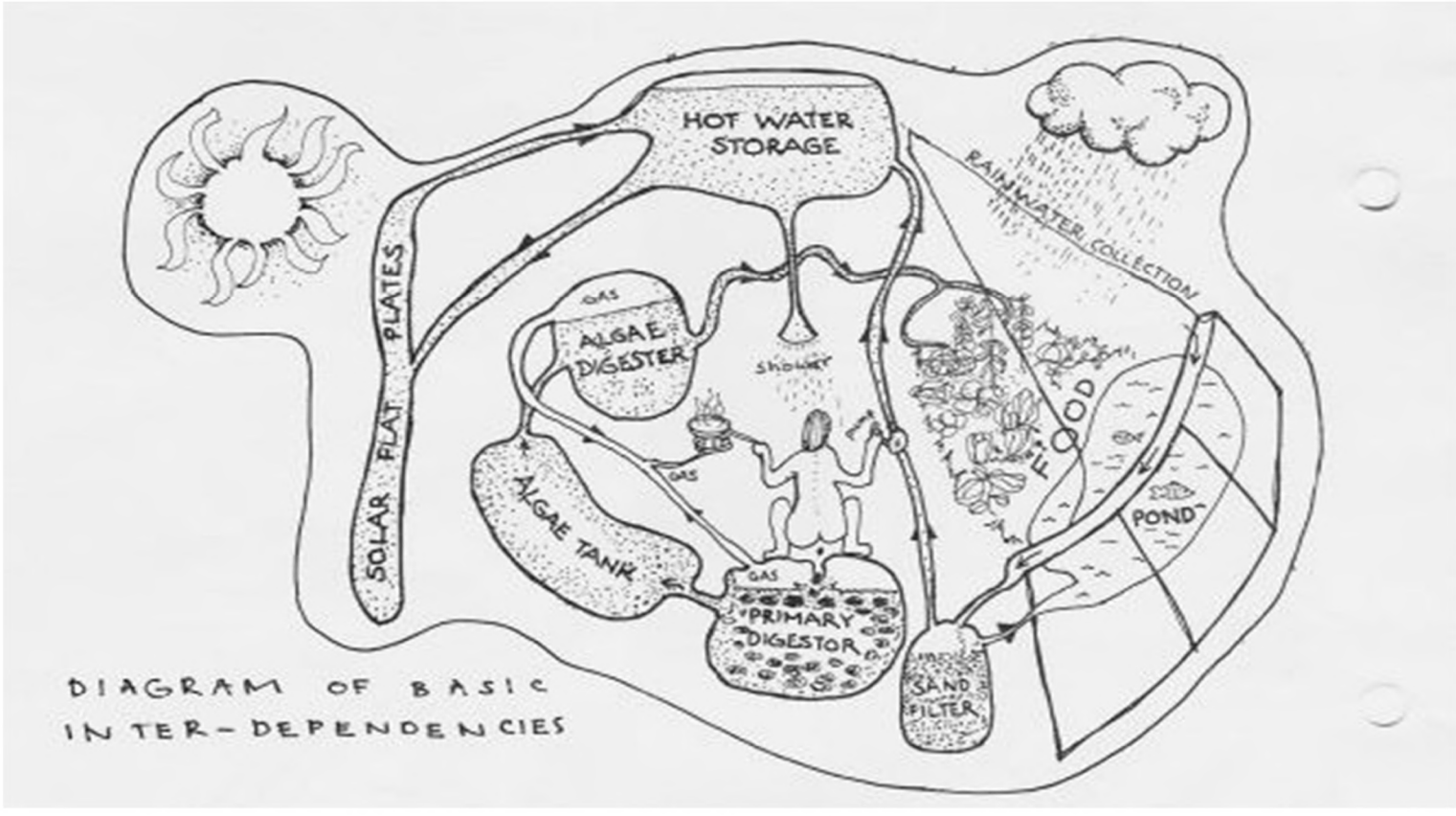
खाद से बायोगैस बनाने के लिए भारत में भी नीतिगत तरीके से सरकारी प्रयास किए गए हैं। राष्ट्रीय बायोगैस और खाद प्रबंधन कार्यक्रम (2009-2010) के दौरान डेढ़ लाख 'परिवार-योग्य' बायोगैस संयंत्र स्थापित करने की योजना बनाई गई थी (अब्बासी आदि, 2012)। हाल के वर्षों में भारत ने एक बायोगैस संयंत्र पेश किया है, जिसे सार्वजनिक शौचालयों में उपयोग किया जा सकता है और यह मानव मल-मूत्र को इकट्ठा करने और बायोगैस में तब्दील करने के लिए एक प्रभावी तरीका साबित हो रहा है। हालाँकि स्थानीय स्तर के सरकारी अधिकारियों के बीच बायोगैस डाइजेस्टर्स के बारे में ज्ञान की कमी ने इस पहल को धीमा कर दिया है।



दिल्ली में एक निवास
तस्वीर : जो अथियाली

खेती से निकलने वाले बचे-खुचे पदार्थ (जैसे पराली) भी खाद बनाने की प्रक्रिया में बहुत बड़ी भूमिका निभा सकते हैं और महत्वपूर्ण खनिजों को मिट्टी में ले जाकर उसे और उपजाऊ बना सकते हैं। यह सामान्य समझ की बात रही है कि खेती से निकलने वाला "कचरा" खनिज-संपन्न होता है; इसलिए उसे मिट्टी में वापस पहुँचाकर उसका उपयोग किसान के हित में है। लेकिन हरित क्रांति के बाद आयी तकनीकों और नीतियों ने सामान्य आबादी और विशेष रूप से किसानों के बीच इस चेतना का बहुत नुकसान किया है। इससे सम्बंधित बुनियादी जानकारी के अभाव में कई किसानों को यह समझ नहीं आता है कि खेती के कचरे को वापस मिट्टी में कैसे इस्तेमाल किया जाए। इस पर और जमीनी चर्चा करने के साथ-साथ इससे जुड़ी जानकारी को फैलाए जाने की जरूरत है।

इन दिनों दिल्ली में कचरों के तीन पहाड़ हैं। पहला पहाड़ भलस्वा में है। यह उत्तरी दिल्ली नगर निगम क्षेत्र में है। दूसरा पहाड़ ओखला में है। यह दक्षिणी दिल्ली नगर निगम क्षेत्र में है। इन पहाड़ों की ऊंचाई दिनबदिन बढ़ती ही जा रही है। नगर निकायों को दिल्ली में नयी जगह नहीं मिल पा रही है जहां वह कचरे का निस्तारण करें, इसलिए चौथे पहाड़ की बुनियाद रखने में बाधा खड़ी है। नई दिल्ली नगर पालिका परिषद् और दिल्ली छावनी परिषद् क्षेत्रों में कोई ऐसा पहाड़ नहीं है। ये दोनों विशिष्ट क्षेत्र हैं। ये अपना कचरा अपने पास नहीं रखते, दूसरे क्षेत्रों के मत्थे मढ़ देते हैं। अगर हम वैज्ञानिक दृष्टि अपनाएँ तो ये कचरे के पहाड़ खड़े ही न हों। इन कचरों का उपयोग करके हम खाद और बिजली प्राप्त कर सकते हैं। इससे हम अपने खेतों को उपजाऊ बना सकते हैं, जरूरी ऊर्जा प्राप्त कर सकते हैं।



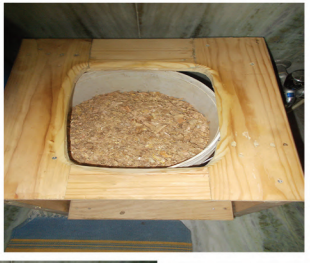
केर्न्स के प्राकृतिक घर के अलग-अलग हिस्सों में आपसी निर्भरता को दर्शाता हुआ खुद केर्न्स का बनाया हुआ स्केच।

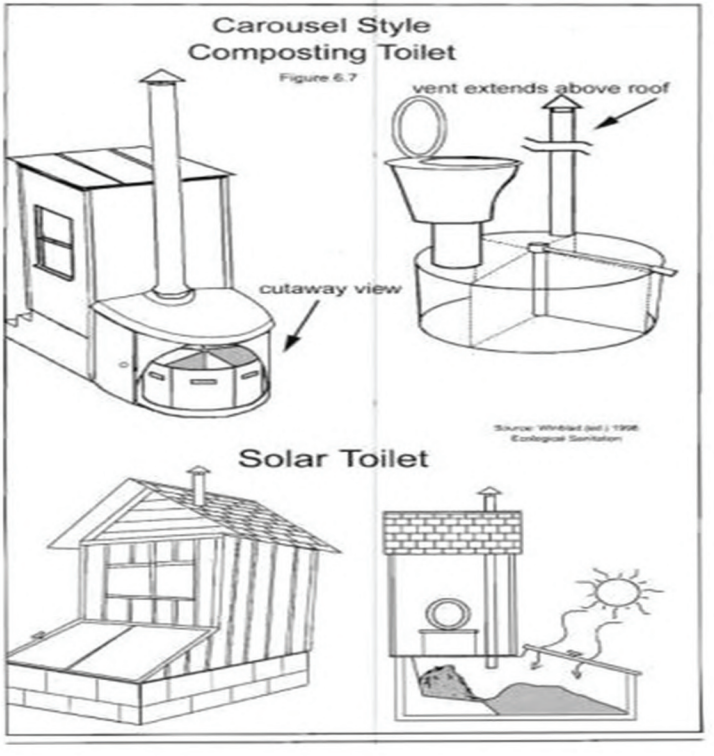
दिल्ली में साग-सब्जी और फल-फूल की कई मंडियाँ हैं। इनके परिसर से रोज हजारों टन कचरा निकलता है। इस कचरे में सब्जियाँ की पत्तियाँ, डंठल, छिलके, सड़ी-गली सब्जियाँ, रस निकलने के बाद फलों के गूदे, फलों के छिलके, जानवरों के गोबर, उनके भूसे के अवशिष्ट, सड़क के बुहारने से धुल-गर्द, आदि होते हैं।

दूसरा कचरा तरल रूप में रहता है। इसमें पशुओं और मनुष्यों के मल-मूत्र शामिल हो नालियों और नालों से होकर बहते हैं।

तीसरे तरह का कचरा किसानों के खेतों में फसल काटने के बाद उसकी मिट्टी से लगा होता है जिसे पराली के नाम से जाना जाता है। आजकल पंजाब और हरियाणा में ही पराली नहीं जलाई जाती, अन्य राज्यों में, दिल्ली के भी खेतों में पराली जलाने का रिवाज-सा हो गया है। हमारे देश के किसान पहले अपने कचरे का इस्तेमाल खाद बनाने के लिए करते थे। हरित क्रान्ति ने उन्हें रासायनिक खादों का गुलाम बनाया तो यह कचरा उनके लिए खाद न रहा, बल्कि एक फालतू चीज़ हो गई। इसे ठिकाने लगाने की समस्या आ खड़ी हुई। और कोई उपाय न सूझा तो वे इसे खेत में ही जलाने लगे। इसे जलाने के कारण न केवल पराली जली, खेत के खरपतवार जले या किसानों की नजर में खेत में मौजूद फालतू चीज जली, बल्कि इससे खेत की मिट्टी भी जली, उस मिट्टी में मौजूद खेती को लाभ पहुँचाने वाले जीवाणु भी जले, खेत की उर्वराशक्ति बढ़ाने वाली विविध सामग्रियाँ तो जलीं ही।



बाएँ : दिल्ली के ग्रेटर कैलाश में रहने वाली दीपा ने अपने शौचालय में मानव मल-मूत्र की कम्पोस्टिंग का तरीका बनाया है। उनका कहना है कि यह ख़याल उन्हें जोसफ जेनकिंस की किताब 'द ह्यूमन्योर हैंडबुक' और सोपान जोशी की किताब 'जल थल मल' पढ़ने से आया। (अधिक जानकारी के लिए इस पुस्तिका के सन्दर्भ पृष्ठ पर देखें)
दाएँ : जोसफ जेनकिंस ने अपनी किताब 'द ह्यूमन्योर हैंडबुक' में मानव मल-मूत्र से कम्पोस्ट बनाने के कई व्यावहारिक मॉडलों के बारे में बताया है। ऐसे ही एक मॉडल 'कैरूसल शैली का कम्पोस्ट शौचालय' की रूपरेखा यहाँ दर्शाई गई है। स्रोत : 'द ह्यूमन्योर हैंडबुक', पृष्ठ ; 116

अगर सही तरीके से उपयोग किया जाए तो कचरा भी मूल्यवान बन जाता है । कचरे को उपयोगी संसाधन में बदलने के लिए शैलजा आर. राव. का सुझाव है, "खेती में बचे अवशेष जिन्हें ज्यादातर खेत से बाहर सड़क पर निकालकर रख दिया जाता है या जला दिया जाता है, उन्हें पोषक तत्वों से भरपूर कंपोस्ट में बदल दिया जाए । कंपोस्ट से भूमि को सूक्ष्म तथा पोषक तत्व प्राप्त होते हैं जो पौधों को बढ़ाते हैं ,जमीन की उर्वराशक्ति में वृद्धि करते हैं, भूमि की संरचना सुधारते हैं तथा जमीन में रहने वाले केंचुए आदि जीवों को भोजन प्रदान करते हैं । इसी प्रकार यह खेती पर खर्चों को कम करते हैं क्योंकि ये महँगे रासायनिक खादों पर किसान की निर्भरता खत्म करते हैं।"

महात्मा गाँधी ने 'खेत का कचरा' शीर्षक लेख के अंतर्गत लिखा है, "हर तरह के पौधे के कचरे से" जिसकी खेत में दूसरी तरह से जरूरत न हो, कपोस्ट बनाया जा सकता है । इस कचरे में ये सब चीजें आ सकती हैं : घासपात, कपास, मटर और तिल के डंठल, टेसू के पत्ते, अलसी, सरसों, काले और हरे चनों के डंठल, गन्ने का कूचा और छिलका, जुवार और गन्ने की जड़े, पेड़ों से गिरे हुए पत्ते और घास -चारा, कड़वी वगैरा के न खाए हुए हिस्से। " (ग्राम- स्वराज्य , पृष्ठ 118)

ऐतिहासिक तौर से अलग-अलग परिवर्तनकारी राजनीतिक विचारों में कचरे के लिए अलग-अलग तरह से अहमियत मिली है। कार्ल मार्क्स ने अपनी किताब 'कैपिटल' के तीसरे खंड में लन्दन के सन्दर्भ में लिखा है, "उपभोग से निकला मैला खेती में बहुत महत्त्व रखता है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था इसकी भव्य बर्बादी करती है। मिसाल के तौर पर लन्दन में 45 लाख लोगों के मल-मूत्र को टेम्स नदी में डालने के सिवाउसका कोई और इस्तेमाल नहीं है, और वो भी भारी खर्च के बाद। "



ओखला लैंडफिल
तस्वीर : जेम्स वेंडलिंगेर

(कैपिटल, तीसरा खंड, पाँचवाँ अध्याय,चौथा भाग)। बाद के मार्क्सवादियों ने "कचरे को इतर रखने और पूँजीवाद" के बीच करीबी सम्बन्ध दिखाने की कोशिश की है। मार्क्सवादी विचारकों का तर्क है कि अगर कोई कचरे के शाब्दिक अर्थ को देखे या कचरे के बारे में लोकप्रिय राय को देखे, तो कचरे का मतलब ज्यादातर उन चीजों से रहता है जिनका कोई इस्तेमाल नहीं हो सकता, जिन्हें कोई नहीं चाहता या जिनके होना बेकार है। पूँजीवादी व्यवस्था में कचरा "मूल्य" का राजनीतिक विपरीत है (विनय गिडवानी और राज्यश्री रेड्डी, 2011)। पूँजीवादी व्यवस्था में जैविक कचरे को कचरा माने जाने को लेकर विरोध हाल के समय में कुछ बढ़ा है, लेकिन जैविक कचरे का कचरे के पहाड़ों में तब्दील होना जारी है।

पूँजीवाद के साथ-साथ राज्य के चंगुल से भी मुक्ति चाहने वाले आन्दोलनों में आत्मनिर्भरता, विकेंद्रीकरण और आपसी मदद के छोटे-छोटे समूह-संगठन बनाए जाने की प्रक्रिया रही है। ऐसा ही एक बड़े महत्त्व का उदाहरण है ग्राहम कैन का जिन्होंने पहला "इको-हाउस" लन्दन शहर में बनाया। लिडिया कलिपोलिती के एक लेख में इसका विस्तार से वर्णन है (लिडिया कलिपोलिटी, 2012)। ग्राहम कैन ने अपनी तरह का यह पहला इको हाउस (प्राकृतिक घर) 1972 में एक जीवंत प्रयोगशाला के तौर पर बनाया था, और जब यह बना तो वहाँ आस-पड़ोस के लोग इसे अचम्भे से देखते रह गए। यह इको-हाउस पूरी तरह कार्यात्मक था जिसमें टैंक और डाईजेस्टर के जरिये कचरे और मल को मीथेन में बदला जाता था और खाना पकाने के लिए ईंधन के तौर पर इस्तेमाल किया जाता था। सौर पैनल लगे थे जिससे पानी गर्म करने और फ़िल्टर करने का काम होता था, ऊर्जा/गर्मी पैदा करने के लिए, मिट्टी की क्षमता बढ़ाने के लिए, बिजली उत्पादन के लिए भी कचरे का ही उपयोग किया जाता था। और एक हाइड्रोपोनिक ग्रीनहाउस था जिसमें मूली, टमाटर और यहाँ तक कि केले भी



भलस्वा लैंडफिल
तस्वीर : अफ़ज़ल अदीब खान,अविकल पाराशरी

उगाए जाते थे। इस घर को बनाने में कैन ने खुद को इसका जीवित हिस्सा बना लिया था जो यह ध्यान रखता था कि इस घर के हिस्सों को कब क्या खुराक देने की जरूरत है। अपने कचरे, खाना पकाने, पानी के उपयोग और रोजमर्रा की हर गतिविधि की कैन बारीकी से निगरानी करते थे और अपनी दिनचर्या को इस घर की दिनचर्या के साथ जोड़कर चलते थे। इस तरह 'निवास' और 'निवासी' के बीच एक गहरा संबंध बना हुआ था।

कैन के इस परिवर्तनकारी प्रोजेक्ट में ब्रिटिश मीडिया ने भी काफी दिलचस्पी दिखाई और इसको लेकर कई समाचार कार्यक्रम चलाए गए। इस प्रोजेक्ट से भारत का भी एक रिश्ता है क्योंकि कैन उस समय भारत में गोबर गैस के लिए बड़े पैमाने पर आंदोलन खड़ा किए जाने से प्रभावित हुए थे। इको-हाउस में सबके सामने आप हाथ से लिखा हुआ बैनर लगा देख सकते थे : फ्रॉम हियर वी ग्रो (यानि, 'यहाँ से हमबढ़ते हैं') काफी दूर तक इसकी चर्चा होने के कारण कई और समूह बने जो कई इस तरह के घर बनाना चाहते थे और इसके लिए फंडिंग देने वालों ने भी हाथ बढ़ाने शुरू किए थे। लेकिन इको-हाउस घर को गैरकानूनी बताकर बहुत अल्प अवधि में ही तोड़ दिया गया और यह एक याद बनकर रह गया। यह प्रोजेक्ट काफी हद तक अमरीकी विचारक और आन्दोलनकारी मुरे बुकचिन के खयालों से प्रेरित था। साथ ही राज्य पर निर्भर हुए बिना जनता की अपनी ताकत के जरिये व्यवस्था-परिवर्तन लाने के विचारों को इस प्रोजेक्ट में जीवित होता देखा जा सकता था। कैन के इको हाउस ने प्रभावी तरीके से यह दिखाया कि प्रकृति में सब कुछ किस तरह एक-दूसरे से जुड़ा है और अगर हम चाहें तो कुछ भी कचरा नहीं है।

(दिल्ली में कचरे के प्रबंधन की जरूरत और कचरे के प्रति नए नजरिये पर यह संक्षिप्त प्रस्तुति जन संसाधन केंद्र द्वारा प्रकाशित शोधपरक पुस्तक *परिदृश्य से अदृश्य होती खेती* पर आधारित है।)

सन्दर्भ

सोपान जोशी (2018) जल थल मल ; राजकमल पेपरबैक्स ; नई दिल्ली. कुल पृष्ठ : 210

जोसफ जेंकिंस (1996), द ह्यूमन्योर हैंडबुक: ए गाइड टू कम्पोस्टिंग ह्यूमन मेन्योर (प्रथम संस्करण) ;जोसफ जेंकिंस, इंक।

एफ. एच. किंग (2004), फार्मर्स ऑफ़ फोर्टी सेंचुरीज: आर्गेनिक फार्मिंग इन चाइना, कोरिया, एंड जापान, कूरियर कारपोरेशन।

तसनीम अब्बासी, एस.एम. तौसीफ और एस. ए. अब्बासी (2012), ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ़ एनारोबिक डाइजेशन एंड "बायोगैस"; बायोगैस एनर्जी, (पृष्ठ 11-23), स्प्रिंगर, न्यूयॉर्क।

शैलजा आर. राव, पारंपरिक तरीकों से और अपने बीजों से रसायनमुक्त खेती ; प्रकाशक : नवदान्या, नई दिल्ली।

मोहनदास गाँधी, ग्राम स्वराज्य, संग्राहक : हरिप्रसाद व्यास ; प्रकाशक : नवजीवन प्रकाशन मंदिर,अहमदाबाद।

कार्ल मार्क्स (1992), कैपिटल वॉल्यूम-3 ; प्रकाशक : पेंगुइन ब्रिटेन।

विनय गिडवानी और राज्यश्री रेड्डी (2011) ; द आफ्टरलाइव्स ऑफ "वेस्ट": नोट्स फ्रॉम इंडिया फॉर एमाइनर हिस्ट्री ऑफ कैपिटलिस्ट सरप्लस; एंटीपोड, 43(5), पृष्ठ : 1625–1658

लिडिया कलिपोलिती (2012); फ्रॉम शिट टू फूड : ग्राहम कैन्स इको-हाउस इन साउथ लन्दन, 1972-1975 ; बिल्डिंग एंड लैंडस्केप्स : जर्नल ऑफ़ द वर्नाकुलर आर्किटेक्चर फोरम, 19. पृष्ठ : 87-106.

दीपा के शौचालय के बारे में और जानकारी के लिए : https://www.facebook.com/deepadeepa/media_set?set=a.10157135205882048&type=3

यह पुस्तिका एक सामूहिक प्रयास का परिणाम है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण योगदान् रहा है दिल्ली के विभिन्न हिस्सों में खेती करने वाले किसानों, मछुआरों, मजदूरों, पशुपालकों, नवीन तरीकों से खेती करने वाले व्यवसायियों का जिन्होंने हमारे साथ बातचीत करने के लिए वक्त निकाला और अपनी राय और जानकारियाँ हमसे साझा कीं, जन संसाधन केंद्र की टीम का जिसने जमीनी शोध करके "परिदृश्य से अदृश्य होती खेती" रिपोर्ट को तैयार किया और जिसके बलबूते हम इस पुस्तिका को तैयार कर सके।

जन संसाधन केंद्र का लक्ष्य सामाजिक आन्दोलनों से प्राप्त मूल्यवान सीखों और संभावित विकल्पों के बारे में सब लोगों की कल्पनाओं को साथ लाकर एकजुटता की नई आधारशिला बनाना है। यह पहल संसाधनों पर लोगों का नियंत्रण वापस लाने की संभावनाएँ बनाने के लिए, और यह समझने के लिए की गई है कि वे कैसे इसके जरिये भूख, बेघरी, प्रदूषण, और जाति, लिंग, धर्म पर टिके सामाजिक अन्याय का उन्मूलन कर सकते हैं। हम संसाधनों के हक के इर्द-गिर्द हो रहे (या संभावित) संघर्ष में आंदोलन समूहों और समुदायों के साथ जुड़कर योगदान करते हैं। सामूहिक प्रतिरोध और रचनात्मक कार्यक्रम के लिए संसाधन उत्पन्न करने के उद्देश्य से हम नियमित रूप से नीतियों की निगरानी, शोध, प्रकाशन और जमीनी स्तर पर नेटवर्किंग के उपाय करते हैं।